ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
PP. NO.- 610-613
ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

बिहार के भोजपुर जिला में नक्सलवादी आन्दोलन : एक समाजशास्त्रीय विश्लेषण

डॉ0 नौमी प्रिया
असिस्टेन्ट प्रोफेसर–समाजशास्त्र, राजकीय महाविद्यालय, सम्भल (उ0प्र0) भारत

Received-05.09.2020, Revised-11.09.2020, Accepted-19.09.2020 E-mail : drnpriya73@gmail.com

सारांशः परिवर्तन प्राकृतिक नियम है लेकिन जब कुछ लोग अपने विशेषाधिकारों की रक्षा हेतु व्यवस्था को यथास्थिति बनाये रखना चाहते है, तो व्यवस्था के शिकार वर्ग उसके विरूद्ध संघर्ष यहाँ तक कि हिंसात्मक आन्दोलन भी करते हैं, क्योंकि वे उसी माध्यम से समस्या का समाधान चाहते हैं। दुनिया में ऐसे बहुत सारे आन्दोलन हुए वैसे ही आन्दोलनों में भारत में एक आन्दोलन हुआ जो बंगाल के सिलीगुड़ी जिला के नक्सलबाड़ी गाँव से प्रारम्भ हुआ, जिसे नक्सलवादी आन्दोलन का नाम दिया गया, जो भारत के बहुत बड़े ग्रामीण हिससे को हिंसा–प्रतिहिंसा का केन्द्र बना दिया। बिहार का भोजपुर जिला भी उन्हीं क्षेत्रों में से एक है, जो परम्परागत एवं नवसामन्तों के विरूद्ध संघर्षरत है।

कुंजीभूत शब्द : नक्सलवादी आन्दोलन, ब्रह्मर्षि सेना, रणवीर सेना, त्रिवेणी संघ, भू–ह्रदबन्दी, सर्वहारा

बिहार के भोजपुर जिला के ग्रामीण क्षेत्र में जो 'नक्सलवादी आन्दोलन की ज्वाला भड़की थी, उसमें हजारों जानें जा चूंकी है। सरकार, राजनीतिज्ञों, बुद्धिजीवियों, प्रशासकों, आम लोगों एवं समाज वैज्ञानिकों के लिए हिंसा–प्रतिहिंसा का यह सिलसिला एक पहेली बनी हुई है। सभी अपने–अपने ढंग से इसकी व्याख्या कर रहे हैं। सरकार इसे कानून एवं व्यवस्था की समस्या मानती है, तो नक्सली संगठन इसके लिए भू–स्वामियों के सामंती व्यवहार प्रतिमान को उत्तरदायी ठहराते हैं, जबकि कुछ लोग इसे जातीय संघर्ष मानते है। वामपंथी विचारक इसे वर्ग संघर्ष का नाम देते है। इस प्रकार नक्सलवादी आन्दोलन की प्रकृति अस्पष्ट एवं विरोधाभासी बन कर रह गई है। इसमें कोई दो राय नहीं कि उक्त सभी विश्लेषणों में आंशिक सच्चाई है, लेकिन कोई भी विश्लेषण नक्सली आन्दोलन की पूर्ण और सम्यक विश्लेषण नहीं है, क्योंकि उन सभी का जोर किसी विशेष तथ्य पर है, जबकि, भोजपुर में जारी नक्सलवादी आन्दोलन बहुआयामी है। इसलिये आन्दोलन की व्याख्या भी बहुआयामी तथ्यों के संदर्भ में ही की जा सकती है। प्रस्तुत शोध निबन्ध इसका सम्यक प्रयास है।

स्वतन्त्र भारत के इतिहास में नक्सलवादी आन्दोलन एक महत्वपूर्ण सामाजिक आन्दोलन है, जो संघर्ष विशेषकर हिंसा के द्वारा व्यवस्था परिवर्तन की वकालत करता है। नक्सली आन्दोलन के संदर्भ में चारू मजूमदार1 का कथन ''दुश्मनों (भूपतियों एवं अमीर लोगों) का सफाया करना, 'वर्ग–संघर्ष' का उच्चतम रूवरूप है... वर्ग संघर्ष एवं दुश्मनों का सफाया किए बगैर गरीब कृषकों का उत्थान संभव नहीं है''। चारू मजूमदार के उक्त कथन के आधार पर नक्सलियों ने निर्णय लिया कि ''भारत में अमीरों की हत्या गरीबी की समस्या का अन्तिम समाधान है।'' यही कारण है कि हिंसा नक्सली आन्दोलन का अपरिहार्य अंग है। कार्ल मार्क्स, लेनिन और माओ त्से तुन्ग के विचारों से प्रेरित इस आन्दोलन की शुरूआत मई 1967 में पश्चिम बंगाल के सिलीगुड़ी सबडिविजन के नक्सलवाड़ी गांव से हुई। बिहार में इसका प्रारम्भ मुजफ्फरपुर के मुसहरी ब्लॉक से हुआ। लेकिन सरकारी दमन एवं सर्वोदयी नेता जयप्रकाश नारायण के शान्तिपूर्ण समाज सुधार के कारण जल्द ही समाप्त हो गया। लेकिन मध्य बिहार में जो नक्सली आन्दोलन फैला है, उसकी शुरूआत भोजपुर से हुई।

भोजपुर का नक्सली आन्दोलन एक स्वतः स्फूर्त जन आन्दोलन है, जो वहाँ की सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों से पैदा हुआ। इस आन्दोलन में शोषित पीड़ित लोगों ने न सिर्फ हिस्सा लिया, वरन् उसका नेतृत्व भी किया। यह आन्दोलन ऐसे समय में प्रारम्भ हुआ जब पश्चिम बांगल में नक्सलवादी आन्दोलन सरकारी दमन, वैचारिक अन्तर्विरोध एवं संसदीय राजनीति के कारण समाप्त हो चुका था। भोजपुर के नक्सली आन्दोलन की एक खास विशेषता यह है कि इसका प्रारम्भ किसी नक्सली संगठन या बाह्य नेताओं के नेतृत्व में नहीं हुआ, बल्कि स्थानीय लोगों के नेतृत्व में हुआ और इसके असली किरदार भूमिहीन खेतिहर मजदूर थे, जो पिछड़ी एवं दलित जाति से आते थे। इसकी दूसरी विशेषता यह है कि यह न सिर्फ भू–स्वामियों के आर्थिक शोषण का परिणाम था बल्कि सामाजिक अपमान का भी परिणाम था। बाद में आन्दोलन के विस्तार के साथ–साथ इनमें राजनीतिक मुद्दे भी शामिल होते गए। भोजपुर में नक्सली आन्दोलन के विकास को समझने के लिए वहाँ की सामाजिक–आर्थिक पृष्टभूमि का विश्लेषण आवश्यक है।

भोजपुर जिला पुराने शाहाबाद जिले के विभाजन के पश्चात 1974 में अस्तित्व में आयाजिसका मुख्यालय आरा है। यह जिला स्वतंन्त्रता के पूर्व से ही किसान आन्दोलन का गढ़ रहा है, जिसका प्रारम्भ 1857 में जगदीशपुर के जमींदार बाबू कुँवर सिंह एवं उनके भाई अमर सिंह के नेतृत्व में अंग्रेजों के विरूद्ध हुआ।2 यद्यपि अंग्रेजों ने इस विद्रोह को दबा दिया तथापि किसानों के असंतोष को रोकने के लिए उन्हें कुशल प्रशासन एवं कृषि को विकसित करने की नीति भी अपननी पड़ी। यहीं कारण है कि बिहार में सबसे

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

पहले भोजपुर में ही अंग्रेजों ने भारतीय दण्ड विधान को लागू किया और 19वी सदी के उत्तरार्द्ध में सोन नहर के द्वारा कृषि को आधुनिक बनाने का प्रयास किया।3 लार्ड कार्नवालिस द्वारा स्थायी बंदोवस्त के तहत जिस जमींदारी व्यवस्था की शुरूआत की गई उसके परिणाम स्वरूप रैयतों का शोषण बढ़ता गया, जो अधिकांश पिछड़ी जातियों के थे। जमींदार रैयतों से लगान वसूली के साथ–साथ नजराना एवं बेगार भी लेते थे। परिणाम स्वरूप उनकी स्थिति बद से बदत्तर होती गई, जिसका उल्लेख लार्ड हेस्टिंग्स4 ने 31 दिसम्बर 1991 को इस रूप में किया– "जमींदारी व्यवस्था से कमजोर वर्गों का बेइंतहा शोषण हो रहा है और प्रशासन उसे दूर करने में सर्वथा अक्षम साबित हो रहा है।" ऐसी स्थिति में जमींदारों और रैयतों के बीच कई बार संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो गई।

सोन नहर के कारण कृषि का विकास हुआ, जिसके परिणाम स्वरूप एक ओर तो जमींदारों को अधिक आय प्राप्त हुई और दूसरी ओर आबादी के एक बड़े हिस्से को आर्थिक स्थायित्व मिली। आर्थिक स्वायित्व प्राप्त करने वाला यह नया तबका जमींदारी उन्मूलन के कब्र से पैदा हुआ, जिनमें यादव, कुर्मी एवं कोयरी जैसी पिछड़ी जातियों के लोग अधिक थे।5 इन पिछड़ी जातियों को वह सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं थी. जिसका वे अपने–आपको हकदार समझते थे। इन्हीं जातियों ने 30 मई 1933 को "त्रिवेणी संघ" बनाकर सामाजिक सुधार आन्दोलन की शुरूआत की एवं जमींदार विरोधी आंदोलन चलाए। इससे यह संकेत मिलने लगे कि भविष्य में "हरित क्रांति", "लाल क्रान्ति" में परिणत हो सकती है, जो वर्तमान में नक्सली आन्दोलन के रूप में दृष्टि गोचर हुई।

भोजपुर मुगलकाल से ही मिलिट्री लेबर मार्केट का सबसे बड़ा केन्द्र रहा है। किवदंती है कि "व्याघ्रसर" तालाब में स्नान करने से व्यक्ति में बाघ जैसी शक्ति आ जाती है। शेरशाह, अकबर के साथ–साथ शिवाजी के सेनाओं में भी बक्सर के रंगरूटों का विशेष महत्व था। अंग्रेजों की पहली वटालियन बंगाल रायफल्स तो भोजपुर के सिपाहियों के बल पर ही खड़ी हुई थी। भोजपुर का समाज वास्तव में एक कृषक–फौजी समाज रहा है। इन फौजी एवं सिपाहियों में अधिकतर सामान्य जाति (ब्राहम्ण, भूमिहार एवं राजपूत) के लोग ही थें। अंग्रेजों ने एक योजना के तहत सामान्य जातियों के रंगरूटों की भर्ती करने की नीति का पालन जारी रखा।6 इस परिघटना का परिणाम यह हुआ कि भोजपुर में हथियारों की आमद हुई और एक लंपट किस्म की संस्कृति का विकास हुआ। और यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि अधिकांश हथियार सामान्य जातियों के हाथों में थीं, जिससे भोजपुर में बंदूक की संस्कृति विकसित हुई। स्वतन्त्रा के पश्चात भी बिहार पुलिस में आरा–छप्परा के लोग अधिक हैं, जो अधिकांश सामान्य जाति के हैं तथा वे गरीब, पिछड़े एवं दलितों के साथ अमानवीय व्यवहार करते हैं। आश्चर्य तो यह है कि जिन जातियों ने सामान्य जातियों की बंदूक की संस्कृति के खिलाफ मुखर लड़ाई लड़ी थी (यादव, कुर्मी, कोयरी) ने स्वयं कालान्तर में वहीं करने लगे जो सामान्य जाति के लोग करते थे। जहाँ सामान्य जातियों ने ब्रह्मर्षि–सेना, कुँवर सेना, सवर्ण लिबरेशन फ्रंट और रणवीर सेना जैसी जातिगत, सेनाओं का गठनकर दलितों पर जुल्म ढाये वैसे ही भूमि सेना एवं लोरिक सेना बनाकर कुर्मी एवं यादवों ने दलितों पर जुल्म ढाये। यह महज संयोग नहीं कि सभी जातिगत सनाओं की बंदूकें दलितों की ओर ही तनी हुई है। इससे स्पष्ट है कि प्रभू जातियाँ परम्परागत भी और नवोदित भी, सामाजिक–आर्थिक वर्चस्व एवं विशेषाधिकार को कायम रखने के लिए ही ऐसा कर रही है। उचित मजदूरी, सम्मान के साथ जीवन जीने का अधिकार, भूमि सुधार आदि की मांग भूमिहीन मजदूर किसान कर रहे थे, जिसे भूस्वामी अपने वर्चस्व एवं विशेषाधिकार के खिलाफ मानते थे। अतः भू–स्वामियों के प्रतिरोध से रक्षार्थ वे नक्सलियों के साथ देना ज्यादा हितकर समझे।

स्वतन्त्रता के पश्चात भूमि सुधार की सारी घोषणाओं एवं प्रयासों के बावजूद स्थिति में कोई विशेष परिवर्तन नहीं आया। यहाँ की कुल खेती योग्य भूमि का 15.2 प्रतिशत हिस्से पर मात्र 1.5 प्रतिशत धनी भूपतियों का प्रत्यक्ष कब्जा है। वास्तविक स्थिति तो यह है कि बड़े भूस्वामी जितनी जमीन रखते हैं, वे उससे कहीं ज्यादा जमीन के मालिक हैं। वे गैर मजरूआ जमीन को भी अपने कब्जे में किए हुए हैं। यह गैर मजरूआ जमीम नक्सली आन्दोलन का बहुत बड़ा कारण बना।

भू–हदबंदी कानून बनने के बाद भूस्वामियों ने बड़े पैमाने पर अपनी जमींन रैयतों से वापस लेने लगे, जिसके परिणाम स्वरूप रैयतों का बड़े पैमाने पर विस्थापन हुआ और वे कृषक मजदूर, हलवाहा –चरवाहा के साथ–साथ कोलकाता में अधिकांश प्रवासी सर्वहारा बनने के लिए बाध्य हुए। आज भी कोलकाता के अधिकांश कुली भोजपुर के ही हैं। प्रवासी सर्वहारा के साथ एक सामाजिक तथ्य यह है कि वे स्वयं तों बाहर रहकर जीविकोपर्जन करते थे, जबकि उनकी पत्नियाँ एवं बच्चे गांव में ही रहते थें, जिनपर भू–स्वामियों की कुदृष्टि लगी रहती थी तथा यदा–कदा बलात्कार के शिकार भी बनती रही। बलात्कार की घटनाओं ने पिछड़ो एवं दलितों को सामान्य जाति के लम्पटों के विरुद्ध लामबन्द करने में महत्वपूर्ण कारक बनी।

भोजपुर में कृषक मजदूरों का एक बड़ा हिस्सा बटाईदारी व्यवस्था पर आधारित है। भू–स्वामी बटाईदारों को जो जमीन देते थे, उसका कोई रिकार्ड नहीं होता था और न कोई लिखित रसीद दिया जाता था। स्वंय खेती करने के नाम पर भू–स्वामी जब चाहते, अपनी जमीन वापस ले सकते थे। बटाईदारी व्यवस्था के तहत भू–स्वामी और बटाईदार खेती में आनेवाले खर्च को आधा आधा वहन करते थे, लेकिन इसमें श्रम और सिंचाई का खर्च अकेले बटाईदार को

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

वहन करना होता था जबकि उत्पादन में दोनों को आधा–आधा हिस्सा होता था। इससे बटाईदारों की स्थिति काफी दयनीय होती चली गई। ये बटाईदार आगे चलकर नक्सलियों के समर्थक बनें ।

भोजपुर के ग्रामीण क्षेत्रों में कृषक मजदूरों की मजदूरी वास्तव में बेगारी के समान थी। मजदूरों को सिर्फ जीने के लिए मजदूरी दी जाती थी। मजदूरी के नाम पर पुरुषों को 2 सेर चावल या आटा तथा महिलाओं को मात्र 1.5 सेर दिया जाता था (1 सेर लगभग 750 ग्राम का होता था। इसे कच्चा किलो माना जाता था)। सरकार द्वारा तय न्यूनतम मजदूरी महज एक मजाक बनकर रह गया। यही कारण है कि मजदूरी के नाम पर कृषक मजदूर ज्यादा गोलबन्द हुए, जिसे भू–स्वामी अपने लिए खतरा समझा और मजदूरी के नाम पर कृषक–मजदूर एवं भू–स्वामियों के संघर्ष का मार्ग प्रशस्त हुआ। इस संदर्भ में यह भी विचारणीय है कि सामान्य जाति के छोटे किसान भी मजदूरी के नाम पर ज्यादा भड़के, क्योंकि इस क्षेत्र के सामान्य जाति के लोग कृषि कार्य करना अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा के विरूद्ध समझते थे, सामाल विशेषकर महिलाएँ। आज भी सामान्य जाति की महिलाएँ खेतों में कार्य नहीं करती।

सामान्य जातियों के भूस्वामियों द्वारा पिछडी और भूमिहीन दलित जातियों पर अत्याचार किया जाना वहाँ की एक सामाजिक हकीकत थी। सामान्य जातियों के भू–स्वामी उनके साथ अपमान जनक व्यवहार करना अपना जन्मसिद्ध अधिकार समझते थे। सन 1975 में दलित जाति के लोगों ने ब्रहमपुर ब्लॉक के नीमज गाँव में जब अपनी सभा की तो सामान्य जातियों के लोगों ने पुलिस के साथ मिलकर उन्हें निर्दयतापूर्वक पीटा। दूसरी ओर पिछड़े एवं दलितों के पढ़े–लिखे युवक सामान्य जातियों के अपमान जनक व्यवहार को सहने के लिए अब तैयार नहीं थे। उनमें सवर्ण विरोधी चेतना पैदा हो रही थी, जो नक्सली आन्दोलन की पृष्टभूमि बनी।

1953 में भोजपुर में कम्युनिस्ट पार्टी की जिला इकाई की स्थापना हुई और उसके बाद 1956 में समाजवादियों एवं साम्यवादियों ने सम्मिलित रूप से नहर लगान के मुद्दे पर तब आन्दोलन चलाया जब सरकार ने प्रति एकड़ नहर सिंचाई की दर पाँच रूपये से बढ़ाकर दस रूपये कर दी। आन्दोलन के दौरान बहुतों की गिरफ्तारी हुई। आगे चलकर सी०पी०आई० के कई नेता जिनमें रामनरेश राम, महाराज महतों और मास्टर जगदीश महतों प्रमुख थे, ने सी०पी०आई० (एम०एल०) में शामिल हो गये, जो आगे चल कर नाक्सली आन्दोलन के अग्रणी बनें। इसका कारण यह था कि सी०पी०आई०, सी०पी०एम० जैसे वामपंथी दल प्रखर रूप से भू–स्वामियों का प्रतिरोध नहीं कर पा रहे थे और न ही मजदूरों के आन्दोलन को परिणति तक ले जाने में सफल रहे।

यद्यपि छठे दशक में भोजपुर में संयुक्त सोशलिस्ट पार्टी के नेतृत्व में समाजवादी आन्दोलन का जबर्दस्त प्रसार हुआ और 1967 के विधान सभा चुनाव में इस पार्टी को शाहाबाद जिले में सात सीटों पर विजयी मिली। प्रारम्भ में संसोपा को पिछडो एवं दलितों को लामबन्द करने में सफलता तो मिली लेकिन वे भूमिहीन मजदूर किसानों की जमीनी समस्याओं को समाधान करने में असफल रहे। और तो और संसोपा दबंग, पिछड़ी जातियों (यादव, कुर्मी, कोयरी) की पार्टी बन कर रह गई। परिणाम स्वरूप एक नव सामन्त वर्ग का उदय हुआ, जो परम्परागत सांमती भूमिका में आने के लिए संघर्षरत था, न कि सामंती व्यवस्था समाप्ति के लिए। ऐसी स्थिति में भूमिहीन कृषक मजदूर, कार्यकारी जातियाँ एवं दलित नए संगठन की ओर उन्मुख हुए, जो इन्हें परम्परागत एवं नवोदित सामन्ती समूहों के शोषण उत्पीड़न से निजात दिला सकें। और इस आशा की किरण उन्हें नक्सवाद में दिखाई दी।

भोजपुर में नक्सलवादी आन्दोलन की पहली चिंगरी सहार ब्लॉक के एकवारी गाँव में फूटी और देखते–ही–देखते एकवारी की चिंगारी दवानल बनकर न सिर्फ भोजपुर को बल्कि सम्पूर्ण मध्य बिहार को अपने दामन में समेट लिया।

एकवारी एक बड़ा गांव है जहाँ भूमिहार प्रबल जाति है। यहाँ की दो–तिहाई जमीन के मालिक भूमिहार हैं। यादव एवं कोयरी मध्यम कृषक है, जबकि कार्यकारी जातियों एवं दलित आमतौर पर भूमिहीन। यहाँ की भूमि काफी ऊपजाऊ है। इसलिए इसे भोजपुर का हरियाणा कहा जाता है। हरित क्रान्ति के कारण यहाँ के भू–स्वामी सम्पन्न हो गये । सम्पन्ता के बावजूद वे मजदूरों को उचित मजदूरी नहीं देते थे। निम्न जातियों को दास समझते थे। दलितों के बहु बेटियों की इज्जत असुरक्षित थी। ऐसे में मास्टर जगदीश महतों, जो आरा के जैन स्कूल में विज्ञान शिक्षक थे, ने उन्हें जगाने का प्रयास किया। उनके प्रयास का वहाँ के जमींदारों ने काफी मजाक उड़ाया। वर्ष 1967 के मई महीना में बिहार विधान सभा का चुनाव था। रामनरेश राम सहार विधान सभा क्षेत्र से सी०पी०आई० (एम०एल०) के प्रत्याशी थे। मास्टर जगदीश महतों उनके चुनाव प्रभारी के रूप में भूपतियों द्वारा किए जा रहे बुथ कैपचरिंग का विरोध किया। परिणाम स्वरूप भूपतियों ने उनकी निर्मम पिटाई कर दी। वे कई दिनों तक अस्पताल में इलाज कराते रहे। जब वे अस्पताल से लौटे तो उनकी जिंदगी ही बदल गई। अब वे नक्सलवादी विचार धारा के समर्थक बन गए और जब चारू मजूमदार के भोजपुर दौरे के दरम्यान वे उनके सम्पर्क में आए तो वे और भी कट्टर नक्सली बन गए। जगदीश मास्टर ने पहली बार न सिर्फ अपने घर के चूल्हे की आग को नक्सलवादी आन्दोलन के अलाव से जलायी बल्कि सामंतों द्वारा अपनी निर्मम पिटाई को पिछड़े दलितों के दमन का प्रतीक बनाकर उनके विरूद्ध खूनी संघर्ष का बिगूल फूंक दिया। जनवरी 1971 से मार्च 1971 के बीच एक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-II, Issues-17, YEAR- Sept. -2020

के बाद एक पाँच सामंतों एवं उनके लठैतों की हत्या कर दी गई।

एकवारी की घटना से प्रेरित होकर आस–पास के अनेक गांवों के दलितों ने भी भू–पतियों के अत्याचार के खिलाफ सर उठाना शुरू कर दिया। वर्षों से दबे–कुचले लोगों के भीतर प्रतिशोध की ज्वाला को नक्सलियों ने भड़का कर लंपट एवं शोषक भू–पतियों का सामूहिक एवं एकल हत्या प्रारम्भ कर दिया। जनवरी 1973 में नक्सलियों के नेतृत्व में चॅवरी गाँव के एक व्यापारी का चावल जब्त कर लिया। 9 अप्रैल 1973 में एकवारी के मुनीनाथ राय की चार विगहा जमीन पर कब्जा कर लाल झण्डा गाड़ दिया। 19 अप्रैल को कारू राय की नक्सलियों ने हत्या कर दी। 6 मई 1973 को जब पुलिस चॅवरी गाँव पहुँच कर दलितों के घरों की तलाशी लेनी चाही तो नक्सलियों ने विरोध किया और घंटों गोलीबारी हुई। पुलिस की गोली से चार दलितों की मौत हो गई, जबकि 19 पुलिसकर्मी भी घायल हुए। पुलिस कार्यवाही को सरकार ने सही ठहराई और कहा कि पुलिस ने आत्मरक्षार्थ गोली चलाई, क्योंकि नक्सली गुरिल्ला युद्ध में प्रशिक्षित थे। पुलिस का नक्सलियों के प्रति दमन बढ़ गया लेकिन इसका परिणाम उल्टा ही हुआ। पुलिस की दमनात्मक कार्रवाइयों के बावजूद नक्सली आन्दोलन दलितों एवं पिछड़ों के बीच लोकप्रिय होता गया और उसकी लपटों से पूरा बिहार प्रभावित हो गया। 1975 आते–आते नक्सलियों ने 65 वर्ग शत्रुओं का सफाया कर चुक थे।

नक्सलियों ने अपना कार्य क्षेत्र विस्तार के लिए दलितों पर होने वाले तमाम अत्याचारों की रोकथाम करना, सामंतवादी लंपटों एवं अपराधियों को सजा देना, न्यूनतम मजदूरी लागू करवाना, हदबंदी से फाजिल एवं गैर मजरूआ जमीनों को भूमिहीनों में वितरित करना, सार्वजनिक सम्पतियों पर से सामन्तों के निजी नियत्रण को समाप्त करना, सरकारी अधिकारियों एवं पुलिस के भ्रष्टाचार एवं दूराचार का विरोध करना जैस मुद्दों पर लोगों को गोलबन्द करने लगें। इन मुद्दों को कार्यान्वित करने के लिए कृषि मजदूरों की हड़ताल करवाई गई, गैर मजरूआ एवं हदबंदी से फाजिल जमीन पर कब्जा किया गया, कुख्यात चोर–डकैतों को सजा दी गई. अत्याचारी सामंतों का सफाया किया गया तथा कुछ के खेतों पर नाकेबंदी लगया गया। पुलिस दमन का विरोध करने के लिए पुलिस पिकेट उड़ाया गया, उनकी हत्या की गई तथा उनके हथियार जब्त किये गए। प्रतिक्रिया में जब कभी सामंतों ने कार्रवाई की उसका मूँहतोड़ जवाब दिया गया। परिणाम स्वरूप सदियों से दबे कुचले लोग नक्सली आन्दोलन में अपना सम्मान जनक जीवन की किरण देखी।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट हो जाता है कि भोजपुर में जो नक्सली आन्दोलन चला, वह अचानक किसी तत्कालीक घटना का परिणाम नहीं था, बल्कि इसकी पृष्टभूमि काफी पहले से तैयार हो चुकी थी। इस नक्सली आन्दोलन के कारण आज न सिर्फ भोजपुर बल्कि पूरा बिहार नरसंहार का पर्याय बन गया, जो लोकतांत्रिक समाज के लिये कलंक है।

अतः नक्सली समस्या के सम्यक सामाधान हेतु समाज वैज्ञानिकों राजनतिज्ञों, प्रशासकों, समाजिक कार्यकर्ताओं को आगे आकर इसके वास्तविक कारणों एवं प्रकृति को समझना होगा। सरकार एवं प्रशासन को नक्सलियों की सही माँगों के प्रति संवेदनशील होना होगा, भूस्वामियों को अपना परम्परागत सांमती सोच बदलना होगा तथा पुलिस को जन साधारण का विश्वास जितना होगा तभी इस समस्या का समाधान संभव है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. चारू मजूमदार, डोम मोरेस, द्वारा उद्धृत 'फ्रॉम ईस्ट एण्ड वेस्ट' विकास, नई दिल्ली, 1971, पृ० सं० 171–172.1
2. के०के० दत्ता, 'बायोग्राफी ऑफ कुँवर एण्ड अमर सिह, 'कुमार नरेन्द्र सिंह द्वारा उद्धृत "बिहार में निजी सेनाओं का उद्भव एवं विकास" वाणी प्रकाशन, पटना, 2005, पृ०सं०–67।
3. कल्याण मुखर्जी "भोजपुरः, ए सोशल एण्ड इकॉनामिक सर्वे" नेशनल लेबर इंस्टीच्यूट, नई दिल्ली (अप्रकाशित), पृ०सं०–19.।
4. कल्याण मुखर्जी एवं राजेन्द्र सिंह यादव, "भोजपुरः, नक्सलिज्म इन दी प्लेंस ऑफ बिहार", राधाकृष्ण प्रकाशन नई दिल्ली, 1980 पृ०सं०–14।
5. अरविन्द नारायण दास, "एग्रेरियन अनरेस्ट एण्ड सोसियों इकॉनामिक चेंज, 1900–1980" मनोहर, नई दिल्ली, 1983, पृ०सं० 2451
6. कोल्फ डी०एच०ए० "नौकर राजपूत एण्ड सिपाही : दी एथनों हिस्ट्री, ऑफ दी मिलिट्री लेबर मार्केट इन हिन्दुस्तान 1450–1850, कैंब्रिज, यूनिवर्सिटी प्रेस, 1990, पृ०सं०. 109।
7. कल्याण मुखर्जी वही पृ०सं०–40।
8. मंजू कला, आर०एन०महाजन और कल्याण मुखर्जी, "पीजेंट अनरेस्ट इन भोजपुर" (सम्पदित) एग्रेरियन स्ट्रगल्स इन इण्डिया आफ्टर इंडिपेंडेंस आंक्सफोर्ड, यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 1986 पृ०सं० 269।

*****